International Journal of Applied Research 2021; 7(11): 217-222

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(11): 217-222
www.allresearchjournal.com
Received: 01-09-2021
Accepted: 03-10-2021

डॉ. कल्पना चौधरी
दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. कल्पना चौधरी
दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली, दिल्ली, भारत

मीरा का काव्य

डॉ. कल्पना चौधरी

मीरा भक्तिकाल की एक महत्वपूर्ण कवयित्री हैं। उनकी कवितायें भक्ति भावना से ओत-प्रोत हैं। उनकी रचनाओं में मध्यकालीन सामंती व्यवस्था की नारी पीड़ा साफ-साफ झलकती है और उनकी इस नारी पीड़ा को भूलकर उनकी कविताओं को समझ पाना आसान नहीं होगा। उस दौर में पुरुष भक्त-कवियों को भी समाज की बहुत सारी मान्यताओं को जैसे- जाति, धर्म, मोह और बड़ाई को छोड़ना पड़ता था फिर एक स्त्री के लिए तो यह बहुत बड़ी चुनौती थी। उस समय, जब स्त्री का घर से बाहर निकलना भी एक अपराध जैसा माना जाता था। मीरा ने इस चुनौती को न केवल स्वीकार किया बल्कि इसके खिलाफ विद्रोह करके स्त्रियों के लिए इतिहास और साहित्य में एक नया अध्याय जोड़ा। मध्यकाल में स्त्री के लिए अपने प्रेम की अभिव्यक्ति करना भी एक अदम्य साहस का विषय था। मीरा ने अपने भक्ति-प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए अपने घर, परिवार और समाज से विद्रोह किया। उनकी कविताओं में लोक-लाज, कुल, मर्यादा आदि के तोड़ने की बात कई जगह कही गई है। लेकिन समाज की चिंता उनकी भक्ति को कभी भी कम नहीं कर पायी-

मैं तो सांवरे संग राँची।
साजि सिंगार बाँधि पग घुँगरू लोक लाज तजि नाँची।
गई कुमति लई साधू कि संगति, भगति रूप भई साँची।
....

उण बिन सब जंग खरों लागत, और बात सब काँची।
मीरा श्री गिरधरलाल सूं भगति रसीली जाँची।"

मीरा ने जो कृष्ण प्रेम की अभिव्यक्ति की है, उसमें एक ऐसी स्त्री का चित्रण है जिसके प्रेम में कदम-कदम पर यह समाज बाधाएँ पहुँचाता है। मीरा ने अपनी प्रेम-भक्ति में घर और समाज दोनो को त्याग दिया तो समाज ने उनकी इस भक्ति भावना को भी बुरी नजर से देखा और इसके लिए उन्हें गलत और बिगड़ी हुई कहकर संबोधित किया-

"म्हारो मण मगण स्याम, लोक कहयाँ भटकी।" (पद 9)
"मीरा गिरधर हाथ बिकाणीख लोक कहयाँ बिगड़ी।" (पद 14)

मीरा का भक्ति-भाव

मीरा का भक्ति-भाव विशुद्ध प्रेम का स्वरूप है। मीरा कृष्ण की उपासिका थी और उन्होंने अपना सर्वस्व कृष्ण प्रेम में ही न्योछावर कर दिया। क्योंकि उनकी भक्ति राग और प्रेम पर ही आधारित थी, इसीलिए मीरा की भक्ति को रागानुगा अथवा प्रेमा भी कहा जाता है। नाभादास जी ने कहा है-

"मीरा ने प्रेमभाव की भक्ति की थी, उनका प्रेम गोपियों का-सा था।"

मीरा की भक्ति में जो सच्चाई और प्रेम की जो गहराई पाई जाती है, वो किसी और भक्त-कवि में दिखाई नहीं पड़ती है। मीरा प्रेम की दीवानी थी और वो कृष्ण के प्रेम में आत्म-विभोर होकर अपने आप तक को भी भूल जाती थी। अपने आराध्य के ध्यान में मगन होकर वो नाचने और गाने लगती थी-

"मेरे तो गिरधर नागर, दूसरा ना कोई।"

प्रेम एवं राग की भावनाएं मनुष्य के हृदय में स्वाभाविक रूप से प्रवाहित होती है किन्तु ये प्रेम-भावनाएं एक ही दिशा में प्रवाहित न होकर अनेक दिशाओं में बहने लगती है जिसकी वजह से मनुष्य पतन की ओर अग्रसर हो जाता है। अगर इन्ही भावनाओं को एकमुखी बनाके एक ही दिशा में प्रवाहित किया जाए, तो ये ही प्रेम मनुष्य को पतन से उत्थान की ओर ले जाती है। मगर इस प्रेम भावना को संसारिक मोह-माया और भौतिक-प्रेम के जाल से निकालकर परमात्मा में लीन करना कोई सहज कार्य नहीं है किन्तु ऐसा होने पर यही प्रेम आध्यात्मिक-प्रेम का रूप ले लेता है। मीरा इसी रागानुगा शैली की उच्च कोटि की भक्त- कवि थीं। कृष्ण के प्रति उनमें भक्ति, प्रेम और अनुराग इस तरह से कूट-कूट कर भरा था कि सांसारिक वस्तुएँ एवं मोह उसके सामने तुच्छ बनकर रह गया था। मीरा को कृष्ण की भक्ति के सामने कुछ भी दिखाई नहीं देता था और उनका सांसारिक प्रेम बिल्कुल खत्म हो चुका था, उन्हें भक्तों की संगत अच्छी लगने लगी थी और समाज के लोगों से घृणा होने लगी थी। यहाँ तक की राणा विक्रमजीत ने उन्हें विष (जहर) का प्याला दिया, उसे भी उन्होंने खुशी-खुशी पी लिया। मीरा को तो लगन लग चुकी थी और कुछ होने ना होने के भय से वो आगे निकल चुकी थी। अपनी पदावली में उन्होंने लिखा है-

"म्यांरा री गिरधर गोपाल दूसरा नाकूयां ।
दूसरा ना कूयाँ सांधा, सकाल लोक जूयां॥
भाया छांड्या बन्धा छांड्या, छांड्या सगा सूयां।
सांधाढिंग बैठ-बैठ लोकलाज खूयां।
भगत देख्या राजी हुयां, जगत देखयां रुयां ।
असवां जल सींच-सींच प्रेम बेलबुयां ।
दध मय घृत काढू लयां, दार दया छुयां ।
राणा विपरो प्यालो भेज्यां, पीय मगन हूयां।
मीरा री लगण लगयां, होना हो जो हूयां।" (मीरा की पदावली)

भक्ति के पाँच प्रमुख प्रकार होते है-1. शांत 2. दस्य 3. सख्य 4 वात्सल्य एवं 5. मधुर। इनमें 'मधुर' ही भक्ति का सर्वोत्तम स्वरूप है। श्री रूपगोस्वामी ने लिखा है-

"यह निवृत जनों के लिए तो अनुपादेय, दुरूह तथा रहस्यपूर्ण है किन्तु योग्य अधिकारी के लिए अत्यंत विशाल और विततांग है।"

मीरा की कविताओं में 'मधुर' भक्ति की सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं। उन्होंने अपनी प्रेम-भक्ति में आने वाली बाधाओं को दर्शाते हुए अपने प्रिय की जुदाई का वर्णन किया है, कि किस तरह प्रियतम सारी बाधाओं को तोड़कर अपने प्रिय के पास जाने को आतुर होती है और ये समाज उसको प्रियतम से मिलने से रोकने के लिए किस तरह की बाधाएँ खड़ी करता है-

"हेली महासूं हरि बिन रहयो ना जाय।
सास लड़े मेरी ननद खिजावै राणा रहया रिसाय।
पहरो भी राख्यो चौकी बिठरयो, टालो दियो जडाय।
पूर्व जनम की प्रीत पुराणी, सो क्यूं छोड़ी जाय।" (मीरा की पदावली, पद-42)

मीरा को किसी भी दार्शनिक सिद्धान्त या वाद से कोई सरोकार नहीं था अपितु उन्होंने अपनी भक्ति व प्रेम को ही अपना साधन बनाया। उनका काव्य विशुद्ध भक्ति का निर्देशक है और मीरा उस भक्ति की साकार प्रतिमा है। मीरा ने ना तो कबीर की तरह धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं को महिमामंडित करने की आवश्यकता समझी, ना ही सूरदास की तरह 'सगुण-निर्गुण' के वाद-विवाद की राह चुनी और ना ही तुलसीदास के 'नाना पुराण निगमागम' के सार

संग्रह की आकांक्षा की।

परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है-

"मीरा गिरधर नागर के अतिरिक्त अन्य किसी को अपना मानती हुई नहीं दिखाई देती ' बाट गहे व्रज कि दुहाई देकर उनकी स्वकीया पत्नी तक होने का प्रसंग छेड़ देती है। "

मीरा ने गिरधर गोपाल की भक्ति में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। इस प्रकार कहा जा सकता है, कि मीरा अंदाल की भांति स्वयं ही गोपी-राधा बन गई थी, इस भक्ति का स्वरूप निश्छल भक्ति है। मीरा की समूची पदावली रस-गागरी है। मीरा की पदावली में अपने ईश (कृष्ण) के प्रति पूज्य भाव है, जो उनके माधुर्य भाव के साथ ही उनके प्रगाढ़-प्रेम को प्रदर्शित करता है। मीरा की प्रेम-साधना में एक अलग ही छाप देखने को मिलती है। वह इस दुनिया के धर्म के अनुसार अपने पति की यादों में लीन नहीं होती बल्कि अपने ईष्ट-स्वामी गिरधर गोपाल कृष्ण की स्मृति में लीन होकर अपना सब कुछ तिरोहित कर देती है-

"प्रेम के पालंगा जा पौड़ूंगी, मीरांहरी रंग राँचुगी।"

मीरा अपने प्रीतम की याद में इस तरह डूबी है, कि वह उसको सपने में भी नहीं भूलती-

"सोवत में ही अपने पलका मई तो पल लागि, पल में पिऊ आये।
मैं जो उठी प्रभु आदर दें को, जाग परी, पिऊ ढूंढे न पाये।"

सभी कृष्ण-भक्त कवियों ने उनको श्रृंगारिक रूप में ही प्रस्तुत किया है जिसमें उनके गोपियों के संग रास लीलाओं में शारीरिक मिलन एवं उत्तेजना प्रकट करने वाले श्रृंगार का ही प्रकाशन किया है। इन कवियों ने कृष्ण जी की छवि को एक रसिक और कामुक बना कर परोस दिया है। यहाँ तक की महान कवि सूरदास जी भी इस श्रृंगारिक प्रस्तुतीकरण से अछूते नहीं रहे। परन्तु मीरा की माधुर्य-भक्ति को निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि यह निश्छल भक्ति से ओत-प्रोत है जिसमें लौकिकता के लिए कहीं पर भी कोई स्थान नहीं है। मीरा के माधुर्य-भाव में अपने आराध्य के लिए एक पूज्य भाव है।

"बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहिनी मूरति सांवरी सुरति नैना बने विसाल।
अधर सुधारस मुरली राजति उर वैजंति माल।
छुद्र घटेका कटि तट सोभित नुपुर सबद रसाल।"

मीरा के आराध्य (श्री कृष्ण)

मीरा के जन्म एवं उनके जीवन की विभिन्न घटनाओं पर विद्वान एकमत नहीं हैं परंतु इस पर किसी को कोई संदेह नहीं है कि वह श्री कृष्ण जीकी उपासिका थी। उनकी भक्ति-भावना इतनी गहरी थी कि आज भी उन्हें प्रेम की दीवानी कहकर याद किया जाता है। मीरा के आराध्य का प्रमाण उनकी मूल पदावली में मिलता है-

"मीरा में यही प्रभु ब्रज-वनिताओं के कन्त हैं, कमल-नयन हैं। उन्होंने काली दह में कूदकर काली नाग को नाथा था और उसके फन फन पर नृत्य किया था। वे एक हैं किन्तु उनकी भुजायें अनन्त हैं।"

'वे ब्रजवासी हैं। उनकी ब्रजलीलाओं को देखकर सांसारिक लोग और भक्त जन सुख प्राप्त करते हैं। वे ब्रज-वनिताओं के लिये अनन्त सुखों की राशि है। ब्रजांगनायें उनके साथ हँसती, गाती, ताली बजाती नाचती और आनन्द पाती है। नन्द और यशोदा के पुण्य से अविनाशी प्रभु (मीरा के आराध्य) प्रकट हुये हैं।'

मीरा के समकालीन और उनके बाद के सभी भक्तों और कवियों ने उन्हें गिरधर नागर श्री कृष्ण की उपासिका माना है, न केवल कृष्ण-भक्त कवियों ने परंतु राम-भक्त कवि नाभादास ने अपने 'भक्तमाल' में कहा है कि गीरा ने 'लोकलाज कुलकानि तजि' गिरधर को भजा। निर्गुणिया संत संप्रदाय के राघौदास ने भी 17वीं शताब्दी में अपने भक्तमाल में मीरा को गिरधर की उपासिका कहा है।

मीरा कृष्ण की उपासिका थीं, इसका प्रमाण केवल मीरा की पदावली में हो नहीं मिलता, अपितु लोक परंपरा भी मीरा को कृष्ण की उपासिका मानती आयी है। बहुत लंबे समय से प्रचलित है-

"नरसी के प्रभु साँवरिया हो, सूरदास के श्याम।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, तुलसीदास के राम।"

मीरा ने अपनी पदावली के कुछ ही पदों में राधा या गोपिकाओं की रास लीलओं को माध्यम बनाया है, ऐसे पदों में भी वे स्वयं ही राधा या गोपी के रूप में प्रतीत होती हैं। अन्यथा मीरा कृष्ण जी से अपने जन्म-जन्मांतर का साथ बताकर, सभी पदों में स्वयं को उनकी प्रिय-पत्नी या दासी के रूप में प्रस्तुत करती हैं। श्रीमति पद्मावती शबनम ने अपने

ग्रंथ 'मीरा एक अध्ययन' में लिखा-
'मीराबाई ने राजस्थानी पदों में अपने आराध्य का जो रूप वर्णन किया वह वृंदावनवासी गोपियों का कृष्ण या द्वारका वासी रणछोड़ जी का रूप नहीं है, अपितु नाथ संप्रदाय के आभूषणों से विभूषित जोगी ही था। प्राचीन साहित्य में कृष्ण के चार विभिन्न रूप दृष्टिगोचर होते हैं। सर्वप्रथम यशोदा के लाड़ले गोकुल के प्यारे गोपाल अहीर की छोकरियों की छछिया भरी छाछ पै नाचने वाले बाल कृष्ण का है, दूसरा मुरली माधुरी गोपियों को लुभाने वाले ब्रज युवराज कृष्ण का, तीसरा भारत के राजनैतिक निपुण कृष्ण का, और चौथा द्वारका के पीताम्बर धारी है। 'मोर मुकुट पीताम्बर धारी गल वैजयन्ती माल' वाले कृष्ण के मधुर रूप की स्थापना और मधुर मधुर भाव की भक्ति ही कृष्ण भक्ति शाखा की विशेषता है। मीरा ने अपने आराध्य को बार बार जोगी नाम से ही संबोधित किया। कृष्ण कि मुरली का स्थान 'नाद' ने मोर मुकुट पीताम्बर गल वैजयंती माल का स्थान, 'सेली वटवो' व बभूति ने ले लिया।

"तेरा मरम नहि पायो रे जोगी
आसन मॉडि गुफा में बैठयो ध्यान हरी को लगाय।"

मीरा के काव्य की रहस्य-भावना

रहस्यवाद की अवधारणा में व्यंजना, रहस्यमय निराकार-तत्व ब्रह्म के प्रति प्रकट होती है। इसमें रहस्यमय प्रेम का प्रकाशन होता है। रहस्यवाद शब्द अंग्रेजी के mysticism का पर्याय है। रहस्यवाद में परमात्मा के प्रति आध्यात्मिक-प्रेम की अभिव्यंजना होती है। मीरा की रहस्य-भावना सिर्फ प्रभु-प्रेम की खुमारी थी इसी से मीरा में दर्शनपरक रहस्यवाद नहीं है।
मीरा के प्रेम का स्वरूप सगुण-साकार गिरधर गोपाल है जिन्होंने ब्रज में अवतार लिया और उसी के आधार पर मीरा को निर्गुणवादी नहीं कहा जा सकता। मीरा का प्रेम श्री कृष्ण के प्रति था, जिसमें प्रेम की व्यंजना थी। इस दर्शन के आधार पर मीरा के प्रेम को रहस्यवादी नहीं कहा जा सकता। मीरा ने अपने ईश के प्रति प्रेम प्रकट करने के लिए प्रकृति को को भी माध्यम नहीं बनाया, अतः प्रकृतिपरक रहस्यवाद की भावना भी उनके काव्य में नहीं मिलती है। मीरा अपने आराध्य के सर्वमय रूप को पहचानती थी।
'उसने ईश्वर के प्रेम रूपी रंग में अपने मन को इस प्रकार रंग लिया कि वह हरिदासी अपनी भावनाओं को काव्य के माध्यम से गाकर प्रकट करने लगी। साँवरिया मोर मुकुट धारण करके आता था, यह उसका रस रूप श्रेष्ठ लीलाकारी रूप है। पर कोई यह ना समझे की मोर मुकुट उसकी सीमा है। ब्रज लीला के बाहर वह है ही नहीं, अत: उसके उस विराट रूप का संकेत भी मीरा कर देती है, जिसके चरणों में ब्रह्मांड भेटता है।
मीरा अपने परमात्मा से मिलने के लिए छटपटाने लगती है। विरह-ज्वाला से उसका शरीर व्याकुल हो उठता है । दिन रात नैन झरते हैं और अपने प्रीतम के इंतजार में पंथ निहारती है। निर्गुण-भक्त बिना बाती, बिना तेल के दीप के प्रकाश में दिन रात अपने परब्रह्म को पुकारती है। बारह मास व्याकुलता से कटते है पर मिलन की आस पूरी नहीं होती। वह कहती है-

"तेरे कारन सांवरे धन जोबन वारों हों।
या सेजिया बहू रंग की बहू फूल बिछाए हों।
पंथ में जोहूँ स्याम का अजहूँ नहिं आए हो।।
मीरां व्याकुल विरहिणी अपनी कर लीजै हो।"

मीरा अपने प्रिय से एक पल के लिए भी दूर नहीं रहना चाहती अगर दूर हो जाती है तो वह उसकी जुदाई में व्याकुल हो जाती है। सावन का महीना है और उनकी सभी संगी-सहेलियाँ झूला झूल रही है, परंतु उसका मन तो अपने प्रिय के दर्शन के लिए प्यासा है। वह पंडितों और ज्योतिषियों से उनके आगमन का शुभ समय पूछती है कि कब उस विरहनी को उसके स्वामी के दर्शन होंगे। साथ-साथ शिकायत भी करती है कि उसके प्रिय ना तो आयें है और ना ही कोई संदेश भेजा है। वह अपनी व्याकुलता बताती है कि अगर पंख होते तो वह अपने प्रिय के पास उड़कर चली जाती। उसी अभिलाषा का एक जीवंत उदाहरण है---

"कोई कहयो रे प्रभु आवन की।
आवन की मन भावन की।
आप न आवै लिख नहिंभेजें बाण पड़ी ललचावन की।
कहा करूँ कुछ नहिं बस मेरो पंख नहिं उड़ जावन की।"

डॉ. मुंशीराम शर्मा ने वेद, पुराण, तंत्र और आधुनिक विज्ञान के आधार पर यही निष्कर्ष निकाला है कि-

"हरिलीला आत्मशक्ति कि विभिन्न क्रीड़ाओं का चित्रण है।"

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने अध्ययन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला है कि-

'रहस्यवादी कविता का केन्द्र बिन्दु वह वस्तु है, जिसे भक्ति साहित्य में लीला कहते है। यद्यपि रहस्यवादी भक्तों कि भांति पाठ-पाठ पर भगवान का नाम लेकर भाव-विहल नहीं हो जाता परंतु वह मूलतः है भक्त ही। ....ये भगवान आगम अगोचर तो है ही, वाणी और मन के भी अतीत हैं, फिर भी रहस्यवादी कवि उनको प्रतिदिन प्रतिक्षण देखता रहता है...। संसार में जो कुछ घट रहा है और घटना संभव है, वह सब उस प्रेममय कि लीला है...। भगवान के साथ यह निरंतर चलने वाली प्रेम केलि ही रहस्यवादी कविता का केन्द्रबिन्दु है।'

मीरा के प्रेम में बहुत गहराई है। इसी प्रेम की गहराई का दर्द, उसकी पीड़ा, उत्कंठा अपने प्रेमी से मिलने के लिए आतुरता, उसके पदों में व्याप्त है। मीरा की रहस्य-भावना का कोई दार्शनिक आधार नहीं है और ना ही उसका प्रेम प्रकृति के क्षेत्र की ऊंचाई को छूता हुआ प्रतीत होता है। मीरा की भावना रहस्योन्मुख इस अर्थ में कही जा सकती है कि उन्होंने अपने मन से प्रियतम की लीलाओं के निरंतर गूढ़ तत्व का रसास्वादन किया हैं। यह मीरा के प्रेम की मार्मिक व्यंजना है ये केवल रहस्य (आनंदमयी लीला) है और मीरा की भक्ति भावना में इसी 'रहस्य' का स्वर है।

मीरा के काव्य में गीति-तत्व

गीतिकाव्य काव्य का श्रेष्ठतम रूप है। यह एक काव्य की विधा है, जिसके अनेकानेक भेद हैं। विविध प्रकार के गीत, प्रगीत, मुक्तक एवं गीतियाँ, 'गीतिकाव्य' के अंग-उपांग हैं। गीतिकाव्य में कवि अपनी आत्मानुभूति को प्रकट करने के लिए किसी माध्यम का सहारा नहीं लेता है। महादेवी वर्मा के अनुसार गीति-काव्य की निम्नलिखित परिभाषा है--

"सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था विशेष का गिने-चुने शब्दों में उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।"

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर गीति-काव्य की तीन प्रमुख विशेषताएँ सामने आती हैं-

1. सुख-दुख की भावावेशमयी अवस्था, 2. संक्षिप्तता और 3. स्वर साधना का उपयुक्त चित्रण अर्थात गेयात्मकता मीरा के काव्य में ये सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं।

1. भावावेशमयी अवस्था या अनुभूति की तीव्रता: मीरा का प्रत्येक पद उनकी आत्म-अनुभूति कराता है। मीरा की कथा अपनी कथा है, वह अपने सुख दुख, हर्ष-उल्लास आदि गीतियों में व्यक्त करती हैं और ये गीतियाँ स्वच्छ निर्मल जल की भांति उसके हृदय को प्रतिबिम्बित करती हैं। किसी गीत में उन्होंने कृष्ण के रूप-सौदर्य के प्रति आकर्षण व्यक्त किया है, तो किसी में पतित पावन प्रभु से उद्धार करने की प्रार्थना की है। प्रिय के प्रति प्रगाढ़-प्रेमवश, जिस प्रकार के भाव मीरा के मन में आए, वही उनकी वाणी से निकलकर गीत बन गए। उनकी प्रत्येक अनुभूति स्वानुभूति है। मीरा के काव्य में किसी प्रकार का विवरण, और ना ही किसी बुद्धिमता का आधार है। मीरा ने अपने और अपने आराध्य के बीच में धर्म, संप्रदाय और समाज किसी को भी कोई जगह नहीं दी है।

"हेरी मैं तो दरद दीवानी, मेरा दरद ना जाने कोय।
और पिया बिन सूनो है म्हारा देस।"

जैसी पंक्तियों में उनके संयत मन की साधनाभूत व्यथा है, जिनमें न अभावों का अतिरंजित कोलाहल है, और न सिद्ध संयम की पाषाण-कालीन जड़ता। गीति-काव्य में नैतिकता का विशेष महत्व होता है क्योंकि व्यक्तिक अनुभूति की संवेदनशील संगीतात्मक अभिव्यक्ति ही गीतिकाव्य है।

व्यक्तिकता मीरा की भक्ति, कृष्ण के प्रति उनका प्रेम, संपुन जीवन, जीवन की यातनाएं, सभी को मीरा ने अपने काव्य में स्थान दिया है। मीरा के काव्य में प्रेम की अभिव्यक्ति के साथ-साथ, भावनाओं का जो मिश्रण है, उसमें संगीत सिर्फ साधन मात्र है। अतएव आत्माभिव्यक्ति और व्यक्तिकता की दृष्टि से उनके गीत सफल हैं। महादेवी वर्मा का कथन बिल्कुल सत्य है जब वह कहती हैं कि-

"मीरा के हृदय में बैठी हुई नारी और विरहिणी के लिए भावातिरेक सहज प्राप्य था."

डॉ. राजकुमार वर्मा ने मीरा जी के बारे में लिखा है कि-

'मीरा के हृदय में निर्झर की भांति भाव आए और अनुकूल स्थान पाकर प्रकट हो गए।... (उनके) हृदय की भावना मन्दाकिनी की भांति कलकल करती हुई आयी और मीरा को कंठस्थ सरस्वती की संगीत-धारा में मिल गई। वह भावना संगीत का सार बनी और उसी में मीरा के हृदय की अनुभूति मिली। सचमुच मीरा के काव्य में उनके अंतरंग का सीधा आत्म-निवेदन है और उनकी वाणी में उनकी सर्वथा अपनी आशा-आकांक्षा एवं व्यथा हुई है।"

2. संक्षिप्तता: संक्षिप्तता काव्य का एक अनिवार्य तत्व है। गीति का जन्म भावनाओं के स्फुरण से होता है। गीति-काव्य

में हृदय को किसी एक धड़कन या उसमें से किसी एक स्पंदन को शब्द दिये जाते हैं। इस प्रकार गीति में अधिक विस्तार नहीं होता, वह पद के किसी एक ही भाव को पूर्ण रूप से चित्रित मात्र करता है। मीरा के पद आकार में संक्षिप्त हैं। मीरा के प्रत्येक पद में प्राय: पाँच या छः चरण होते हैं, अतः उनमें भाव का विस्तार अधिक नहीं है। मीरा ने अपने गीतों को स्वच्छंद रूप से लिखा है। मीरा के गीत, एक साधिका के मन की विभिन्न दशाओं का एकमुक्त भाव है। ये मुक्त गीतियाँ भी तीन प्रकार की हो सकती हैं- स्वानुभूति परक, अध्यासमूलक तथा बाह्य वस्तु मूलक। मीरा के काव्य में, कृष्ण के रूप लावण्य के चित्रण में वही शब्द प्रयुक्त हुए हैं, जो उनके 'मोहिनी मूरत तथा सांवरी सूरत' के लिए आवश्यक हैं-

"मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई।।"

मीरा ने अपनी भावनाओं को स्पष्ट स्वरों में पिरोया है, इस प्रकार मीरा के गीत शुद्ध स्वानुभूतिपरक हैं।वे कहती है-

"माई मेरो पिया बिन अलूणों देस।।
सेज अलूणी, भवन अकेली, रेण भयंकर भेस।
आव सलूणी प्रीतम प्यारे, बीते जीवन-वेस॥"

संक्षिप्तता और अन्विति एक-दूसरे के पूरक हैं। कम से कम शब्दों में भावों की सहज अभिव्यक्ति को अपनी पूर्ण सार्थकता से प्रस्तुत करना ही गीतियों का कार्य है। गीतों की संरचना में भक्ति का विशेष योगदान है।

3. गेयात्मकता: संगीतात्मकता गीतकाव्य का एक महत्वपूर्ण तत्व है इसीलिए "कविता को शब्दमय संगीत कहा जाता है और संगीत को ध्वनिमय कविता" मीरा का काव्य संगीत प्रधान है। मीरा में आत्मानुभूति, जो गीति का केन्द्र है और संगीत, जो गीति की परिधि है, का बहुत सुंदर मिलन है। मीरा के पदों में सगुण गीतकारों एवं निर्गुण संत गीतकारों की शैलियों का मिश्रण पाया जाता है। उनके सभी पद गेय हैं, और राग-रागनियों से बद्ध हैं, अत: मीरा काव्य की गेयता स्वतः सिद्ध होती है। मीरा ने लगभग साठ राग-रागनियों का अपने काव्य में प्रयोग किया है। सांगीतिक आधार की दृष्टि से भी गीतियों को दो भागों में बाँटा जा सकता है-
(i) वे गीतियाँ जिनमें शब्दों, विचारों और भावों के संगीत होते हैं। (ii) वे गीतियाँ जो शास्त्रीय बंधन को स्वीकार करती हैं। गीतियों में स्वर और लय ऊपर से आरोपित नहीं होते बल्कि शब्दों में ही अंतर्निहित होते हैं।
मीरा के संगीत में पारंपरिकता है जो अभिव्यक्ति का साधन है। गीत-काव्य की दृष्टि से भक्तिकालीन गीत सर्वाधिक सार्थक हैं। भक्ति ही वह भाव है, जो गीति-तत्वों को उभारकर व्यक्ति को गीति-रचना में प्रवृत करती है।

संदर्भ-सूची

1. नाभादास- श्री भक्तमाल रूपमाला।
2. श्री रूपगोस्वामी - निर्वत्तानुपयोगित्वाद दुरुहत्वादर्य रस।
3. परशुराम चतुर्वेदी- मीरा स्मृति ग्रंथ, लेख-संत मत मीरा।
4. पद्मावतो शबनम- मीरा एक अध्ययन।
5. डाकोर पद- 14
6. भारतीय साधना और सूरदास।
7. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी– साहित्य का साथी।
8. डॉ. रामखिलावन पांडे- गीति-काव्य।
9. Edwards D. The new dictionary of thoughts, p. 470.